अध्याय

4

राजस्थान में जनजातियों के आंदोलन

राजस्थान में स्थानीय सामन्तवाद व ब्रिटिश साम्राज्यवाद के मध्य अपवित्र गठबन्धन का प्रतिरोध सर्वप्रथम मेर, मीणा एवं भील जनजातियों ने किया।

मेर विद्रोह (1818–1824) :

मेरों द्वारा आबाद क्षेत्र अंग्रेजों के आगमन के पूर्व सीधे तौर पर किसी राजनीतिक सत्ता के नियंत्रण में नहीं था। मेरों द्वारा आबाद क्षेत्रों के भू–भाग मेवाड़, मारवाड़ एवं अजमेर के अन्तर्गत थे, किन्तु मेरों पर इनका राजनीतिक व प्रशासनिक नियंत्रण नहीं था। सर्वप्रथम अंग्रेजों ने उन्हें अपने पूर्ण नियंत्रण में लाने का प्रयास किया था। यही मेरों के विद्रोह का प्रमुख कारण बना।

सन् 1818 में अजमेर के अंग्रेज सुपरिन्टेन्डेन्ट एफ. विल्डर ने झाक एवं अन्य गांवों, जो मेरवाड़ा क्षेत्र के केन्द्र बिन्दु माने जाते थे, के साथ समझौता किया, जिसके अनुसार मेरों ने लूट–पाट न करने की सहमति प्रदान की। मार्च, 1819 में विल्डर ने किसी साधारण घटना को मेरों द्वारा उपर्युक्त समझौते को तोड़ना सिद्ध करते हुए मेरवाड़ा पर आक्रमण कर दिया। उसने नसीराबाद से सैनिक साथ लेकर मेरों के खिलाफ दण्डात्मक अभियान आरम्भ किया। मेरों को दण्डित किया गया तथा उन पर नियमित निगरानी रखने के लिए मेरवाड़ा क्षेत्र में पुलिस चौकियां स्थापित कीं। इस प्रकार अंग्रेजों द्वारा मेरों को घेरने की नीति आरम्भ की गई। अतः प्रतिक्रिया स्वरूप मेरों ने सन् 1820 के आरम्भ से ही जगह–जगह विद्रोह कर दिया तथा अपने क्षेत्रों से पुलिस चौकियों व थानों को हटाने का प्रयास किया। नवम्बर, 1820 में झाक नामक स्थान पर ब्रिटिश पुलिस के हत्याकाण्ड ने अंग्रेजों तथा साथ ही मेवाड़ व मारवाड़ राज्यों को भयभीत कर दिया था। यहां मेर विद्रोह अत्यन्त व्यापक व भयानक था। मेरों ने अनेक स्थानों पर अंग्रेजी पुलिस चौकियों को जला दिया था तथा सिपाहियों को मार दिया था। बढ़ते हुए मेर विद्रोह को दबाने के लिए अंग्रेजी सेना की तीन बटालियनों, मेवाड़ एवं मारवाड़ की संयुक्त सेनाओं ने मेरों पर आक्रमण किया, जिसमें भारी जन–धन की हानि हुई। ये सेनाएँ जनवरी, 1821 के अन्त तक मेर विद्रोह का दमन करने में सफल रहीं।

1822 ई. में मेरों से गठित मेरवाड़ा बटालियन ब्यावर मुख्यालय पर स्थापित की गई। लम्बे समय तक सम्पूर्ण मेरवाड़ा क्षेत्र ब्रिटिश नियंत्रण में रहा। ब्रिटिश प्रशासन उन्नीसवीं सदी के अन्त तक कठोर दमनात्मक उपायों का सहारा लेकर मेरवाड़ा में शान्ति स्थापित करने में सफल रहा। बीसवीं सदी के

प्रारम्भिक वर्षों में अंग्रेजों ने मेरों में समाज सुधार गतिविधियों का प्रारम्भ किया। इस प्रकार अंग्रेज 1947 तक मेर विद्रोहों को नियन्त्रित करने में सफल रहे।

भील विद्रोह (1818–1860) :

भील मूलतः एक शान्तिप्रिय जनजाति रही है। वे अंग्रेजों के आगमन तक स्वतंत्र जीवन व्यतीत कर रहे थे तथा 1818 ई. के पश्चात् उनके ऊपर स्थापित अर्धसामंती व अर्ध औपनिवेशिक नियंत्रण ने उन्हें विद्रोह के लिए बाध्य किया।

1818 ई. में उदयपुर राज्य के भीलों ने अनेक कारणों से विद्रोह किया। एक तो भीलों पर कर थोपने के अंग्रेजी प्रयासो ने भीलों में असंतोष को जन्म दिया। दूसरा, अंग्रेजों की भील दमन नीति ने भीलों के मन में अंग्रेजों के विरुद्ध अनेक मनोवैज्ञानिक संदेह उत्पन्न कर दिए थे। तीसरा, ईस्ट इंडिया कंपनी के सहायक सन्धि के तुरन्त पश्चात् उदयपुर राज्य का आन्तरिक प्रशासन जेम्स टॉड ने अपने हाथ में ले लिया था तथा उसने भीलों पर राज्य का प्रभुत्व स्थापित करने के लिए भीलों को अपने नियंत्रण में लाने का प्रयास किया। चौथा, 1818 की सन्धि के पश्चात् अधिकांश देशी सेनाओं को भंग कर दिया गया था। भील राज्य एवं जागीरदारों की सेना में नियमित अथवा अनियमित रूप से नियुक्त रहते थे तथा इन सेनाओं के भंग होने से बेरोजगारी के चलते उनमें असंतोष उत्पन्न होना स्वाभाविक ही था। पांचवा, भील अपनी पाल के समीप ही गांवों से रखवाली (चौकीदारी कर) नामक कर तथा अपने क्षेत्रों से गुजरने वाले माल व यात्रियों से बोलाई (सुरक्षा) नामक कर वसूल करते थे। जेम्स टॉड ने राज्य की आय व राजस्व में वृद्धि के प्रयासों के अन्तर्गत तथा भीलों पर कठोर नियंत्रण स्थापित करने के ध्येय से भीलों से उनके ये अधिकार छीन लिए थे। यह भील–विद्रोह का तात्कालिक कारण बना। भीलों ने अपने इन परम्परागत अधिकारों को छोड़ने से इन्कार करते हुए अंग्रेजों व उदयपुर राज्य के विरुद्ध विद्रोह कर दिया।

1818 ई. के अन्त तक उदयपुर राज्य के भीलों ने यह चेतावनी देते हुए अपनी स्वतंत्रता घोषित कर दी कि यदि सरकार उनके आन्तरिक मामलों में हस्तक्षेप करेगी, तो वे विद्रोह के लिए बाध्य होंगे। भीलों ने अपने क्षेत्रों की नाकेबन्दी करते हुए राज्य के विरुद्ध बगावत कर दी। लम्बे समय तक राज्य के अधिकारी भील क्षेत्रों में नहीं घुस सके। 1820 ई. के आरम्भ में अंग्रेजी सेना का एक अभियान दल विद्रोही भीलों के दमन हेतु भेजा गया, किन्तु इसे सफलता नहीं मिली। अंग्रेजी सेना की इस असफलता ने भील–विद्रोह को और अधिक तीव्र कर दिया था। आगे चलकर जनवरी, 1823 ई. में ब्रिटिश व रियासत की संयुक्त सेनाओं ने दिसम्बर, 1823 ई. तक भील विद्रोह को दबाने में सफलता प्राप्त की।

उदयपुर राज्य के भील–विद्रोहों से प्रभावित होकर डूंगरपुर व बांसवाड़ा राज्यों के भीलों ने भी अल्प अशान्ति उत्पन्न की तथा 1825 में आदिवासी विद्रोहों की बिखरी हुई घटनाएँ घटीं। डूंगरपुर राज्य में स्थिति अधिक गम्भीर थी। इसलिए भीलों के दमन हेतु अंग्रेजी सेना भेजी गई, किन्तु वास्तविक संघर्ष आरम्भ होने के पूर्व ही भील मुखियाओं ने मई, 1825 में समझौता कर लिया। इसी प्रकार का समझौता डूंगरपुर राज्य की सिमूर वारु, देवल एवं नन्दू पालों के भीलों ने भी किया। उपर्युक्त समझौते के प्रावधान एकपक्षीय थे, किन्तु इनके माध्यम से अंग्रेज लम्बे समय तक डूंगरपुर राज्य में शांति बनाए रखने में सफल रहे।

उदयपुर राज्य के भीलों ने कभी भी इस प्रकार की शर्तें स्वीकार नहीं की तथा अंग्रेजों व उदयपुर

राज्य के समक्ष समर्पण नहीं किया। जनवरी, 1826 ई. में गिरासिया भील मुखिया दौलत सिंह एवं गोविन्दराम ने अंग्रेजों व उदयपुर राज्य के खिलाफ विद्रोह कर दिया था। 1826 ई. में लम्बी बातचीत के उपरान्त दौलत सिंह के आत्मसमर्पण के पश्चात् ही यह विद्रोह समाप्त हुआ। अंग्रेजों व उदयपुर राज्य ने 1838 ई. तक भीलों के प्रति उदार नीति अपनाई क्योंकि दमनात्मक सैनिक आक्रमणों के वांछित परिणाम प्राप्त नहीं हुए थे। यूं छुट–पुट भील उपद्रव की घटनाएँ जारी रही, किन्तु कुल मिलाकर 1838 तक उदयपुर राज्य में शान्ति रही। 1836 में बांसवाड़ा राज्य में भील उपद्रव हुए, जिन्हें अंग्रेजी सेना की सहायता से बांसवाड़ा के महारावल ने तुरन्त नियंत्रित कर दिया था।

अंग्रेजों ने बल प्रयोग के उपाय नहीं छोड़े, बल्कि मेरवाड़ा बटालियन की पद्धति पर भीलों के विरुद्ध लम्बी सैनिक योजना तैयार की, जिसके अन्तर्गत भीलों पर नियंत्रण स्थापित करने के उद्देश्य से भीलों की सेना के गठन का निर्णय किया। अप्रैल, 1841 में गवर्नर जनरल ने अपनी सलाहकार परिषद की सलाह पर मेवाड़ भील कोर के गठन को स्वीकृति प्रदान कर दी। मेवाड़ भील कोर का मुख्यालय उदयपुर राज्य में खैरवाड़ा रखा गया। मेवाड़ के भील क्षेत्रों में खैरवाड़ा एवं कोटड़ा में दो छावनियां स्थापित की गई।

अंग्रेजों के सैनिक उपाय कुछ समय तक ही भीलों को शान्त रख सके थे। 1844 में बांसवाड़ा राज्य में छुटपुट भील विद्रोह हुए। इसी समय माही काठा एजेन्सी के अन्तर्गत पोसीना (गुजरात) एवं सिरोही राज्य के भील व गिरासिया विद्रोही हो गए थे। बांसवाड़ा राज्य के भील विद्रोह को गुजरात में 1846 के कुंवार जिवे वसावो के नेतृत्व में गुजरात के भील–विद्रोह से बढ़ावा मिला। बांसवाड़ा राज्य ने अपने वकील कोठारी केसरीसिंह को सहायता हेतु वेर्स्टन मालवा ब्रिटिश एजेन्ट के पास भेजा तथा अंग्रेजी सेना की सहायता से 1850 ई. के अन्त तक भील–विद्रोह को कुचल दिया गया था।

1850 ई. से 1855 ई. के मध्य कोई बड़े भील–विद्रोह की घटना नहीं घटी, किन्तु दिसम्बर, 1855 में उदयपुर राज्य के कालीबास के भील विद्रोही हो गए थे। महाराणा ने मेहता सवाई सिंह को एक सेना लेकर 1 नवम्बर, 1856 को भीलों के दमन हेतु भेजा सेनाओं ने गांवो में आग लगा दी तथा भारी संख्या में भीलों को मौत के घाट उतार दिया गया। 1860 ई. तक निरन्तर छुटपुट भील–विद्रोह की घटनाएँ घटती रही। 1857 ई. की क्रांति के दौरान भी भील विद्रोहों की सम्भावना थी, किन्तु भील इस राष्ट्रीय क्रान्ति से अनभिज्ञ थे तथा राजकीय पलटनों ने अंग्रेजों के प्रति विद्रोह नहीं किया।

वर्ष 1861 में उदयपुर के समीप खैरवाड़ा क्षेत्र में भील उपद्रवों की घटनाएँ सामने आई। 1863 ई. में कोटड़ा के भील हिंसक गतिविधियों में संलग्न हो गए, जिसकी जिम्मेदारी मेवाड़ भील कोर के कमान्डिंग अधिकारी ने उदयपुर राज्य पर सौंपी, क्योंकि राज्य के प्रशासनिक अधिकारी भीलों के साथ उचित व्यवहार नहीं कर रहे थे। इन आधारों पर हाकिम को स्थानान्तरित कर दिया तथा सैनिक कार्रवाई व शान्तिपूर्वक समझाकर भील उत्पात को शान्त कर दिया गया था। तत्पश्चात् 1867 ई. में खैरवाड़ा व डूंगरपुर के मध्य देवलपाल के भीलों ने उत्पात आरम्भ कर दिया, जिसे मेवाड़ भील कोर ने कुचल दिया था। 1872–75 के दौरान बांसवाड़ा में भील–विद्रोह की अनेक घटनाएँ घटीं।

बांसवाड़ा राज्य में चिलकारी व शेरगढ़ गांवों के भील छापामार गतिविधियों द्वारा अशान्त रहे। 1873 – 74 के दौरान इन गांवों के भीलों ने खुला विद्रोह कर दिया था उनकी गतिविधियाँ मध्य भारत

के सैलाना व झाबुआ राज्यों तक फैल गई थी। 1881–1882 में उदयपुर राज्य के भील अंग्रेजों व राज्य के विरुद्ध उठ खड़े हुए थे। यह 19वीं सदी का सबसे भयानक भील विद्रोह सिद्ध हुआ। असल में यह लम्बे समय से एकत्रित भील आक्रोश का विस्फोट था।

26 मार्च, 1881 की रात में राज्य की सेनाएँ मामा अमानसिंह (राज्य का प्रतिनिधि) एवं लोनारगन (अंग्रेज प्रतिनिधि) के नेतृत्व में बारापाल पहुँची। इसके साथ महाराणा का निजी सचिव श्यामलदास भी था। 27 मार्च को सेना ने बारापाल में सैंकड़ों भील झोंपड़ियों को जलाकर राख कर दिया। 28 मार्च को पूरे दिन सैनिक अभियान जारी रहा था तथा बारापाल के आस–पास भीलों के झोंपड़ों को जलाया जाता रहा। फौज की इन कार्रवाइयों से बचने के लिए अधिकांश भीलों ने परिवार सहित स्वयं अपने घरों को उजाड़कर सघन जंगलों व पहाड़ियों की ऊँची चोटियों पर पहुंचकर सुरक्षात्मक स्थिति प्राप्त कर ली थी।

अपनी स्थिति सुदृढ़ कर भीलों ने मार्ग में बाधा उत्पन्न कर राज्य की सेनाओं को आगे बढ़ने से रोक दिया। निराश सेना व सेनापतियों ने सुरक्षात्मक स्थिति लेकर रिखवदेव में डेरे डाल दिए थे। यहाँ लगभग 8000 भीलों ने इन्हें घेर लिया। इस विद्रोह के प्रमुख नेता बीलखपाल का गामेती नीमा, पीपली का खेमा एवं सगातरी का जोयता थे। सैनिक अधिकारियों ने भीलों के साथ शान्ति–समझौते के प्रयास किए, किन्तु कोई सफलता नहीं मिली। महाराणा के निजी सचिव श्यामलदास ने रिखवदेव मन्दिर के पुजारी खेमराज भंडारी के माध्यम से भील नेताओं से वार्ता आरम्भ की। अन्त में 25 अप्रैल, 1881 को भीलों के साथ एक समझौता हो गया। राज्य के अधिकारी आधा बराड़ कर छोड़ने, भविष्य में भीलों को जनगणना कार्यों से कष्ट न पहुँचाने एवं विद्रोही भीलों को माफी देने पर सहमत हो गए। भीलों ने राज्य के नियमों के पालन करने का वचन देते हुए कानून–विरोधी गतिविधियों में संलग्न न होने की स्वीकृति दी। उपर्युक्त समझौते ने एक भयंकर भील–विद्रोह को शान्त अवश्य कर दिया था, किन्तु पूर्ण शान्ति स्थापित नही हो पाई थी।

यद्यपि मेवाड़ की भील समस्या को 19वीं सदी के अन्त तक पर्याप्त सीमा तक सुलझा लिया गया था, किन्तु डूंगरपुर व बासंवाड़ा के भीलों पर विशेष ध्यान नहीं दिया गया था। अतः 20वीं सदी के प्रारम्भिक वर्षों में डूंगरपुर व बासंवाड़ा राज्यों में गोविन्द गिरि के नेतृत्व में शक्तिशाली भील आन्दोलन आरम्भ हुआ। गोविन्द गिरि ने भीलों के उत्थान हेतु समाज एवं धर्म सुधार आन्दोलन आरम्भ किया था जो आगे चलकर राजनीतिक –आर्थिक विद्रोह में परिवर्तित हो गया था। गोविन्द गिरि डूंगरपुर में बेडसा नामक गांव के निवासी एवं जाति से बंजारा थे। वे स्वयं छोटे किसान थे। उनकी निर्धन आर्थिक दशा एवं उनके पुत्रों व पत्नी की मृत्यु ने उन्हें अध्यात्म की ओर प्रेरित किया तथा वे संन्यासी बन गए। वे कोटा, बूँदी अखाड़े के साधु राजगिरि के शिष्य बन गए। उन्होंने धूनी स्थापित कर एवं निशान (ध्वज) लगाकर आस–पास के क्षेत्र के भीलों को आध्यात्मिक शिक्षा देना आरम्भ किया।

गोविन्द गिरि के विचारों ने भीलों को जागृत किया एवं उन्हें अपनी दशाओं व अधिकारों के प्रति जागरूक बनाया। इन विचारों ने उन्हें यह सोचने के लिए भी बाध्य कर दिया था कि उनके वर्तमान शासकों ने उन्हें पराधीन कर रखा है, जबकि वे स्वयं इस भूमि के स्वामी थे एवं इन्हें इस पर पुनः शासन करना चाहिए। इस प्रकार यह समाज एवं धर्म सुधार आन्दोलन आर्थिक एवं राजनीतिक आन्दोलन में बदलता जा रहा था।

गोविन्द गिरि की उपर्युक्त शिक्षाओं व कल्याणकारी गतिविधियों के कारण उनका भगत पंथ भीलों में अत्यधिक लोकप्रिय हो रहा था। गोविन्द गिरि के बढ़ते हुए प्रभाव से राजा, उनके अधिकारी एवं जागीरदार चिंतित होने लगे थे कि उसका बढ़ता हुआ प्रभाव कहीं उनकी सत्ता को पलट न दे। अतः वे इन उपदेशकों अथवा प्रचारकों को अपने राज्य अथवा जागीर की सीमाओं से बाहर निकल जाने पर बाध्य करने लगे, जिससे वर्गीय कटुता बढ़ने लगी तथा समाज एवं धर्म सुधार आन्दोलन राजनीतिक स्वरूप प्राप्त करने लगा था। सन् 1908 में गोविन्द गिरि ने राजपूताना छोड़कर 1910 तक एक कृषक के रूप में गुजरात के सूंथ एवं ईडर राज्य के भीलों में कार्य किया। उन्होंने इन राज्यों के भीलों को जाग्रत कर उनका शक्तिशाली जन आन्दोलन तैयार किया था। ईडर राज्य के अन्तर्गत पाल–पट्टा में भील आन्दोलन से ऐसी स्थिति उत्पन्न हुई कि वहाँ के जागीरदार ने भीलों के साथ 24 फरवरी, 1910 को एक समझौता किया। इस समझौते के अन्तर्गत कुल 21 शर्तें थीं जो भीलों के अधिकारों से सम्बंध रखती थीं। इस समझौते ने राजस्थान व गुजरात के भीलों को सामन्ती शोषण के विरुद्ध लड़ने का उत्साह दिया। यह समझौता गोविन्द गिरि के आन्दोलन की सफलता कहा जा सकता है। सन् 1911 के आरम्भ में वह डूंगरपुर स्थित अपने मूल स्थान बेडसा वास आए। वहां उसने धूनी स्थापित कर भीलों को आधुनिक पद्धति पर उपदेश देना आरम्भ किया। सन् 1911 में उन्होंने अपने पंथ को नए रूप में संगठित किया तथा धार्मिक शिक्षाओं के साथ–साथ भीलों को सामन्ती व औपनिवेशिक शोषण से मुक्ति की युक्ति भी समझाने लगे। उन्होंने प्रत्येक भील गांव में अपनी धूनी स्थापित की तथा इनकी रक्षा हेतु कोतवाल नियुक्त किए गए थे। गोविन्द गिरि द्वारा नियुक्त कोतवाल केवल धार्मिक मुखिया ही नहीं थे, बल्कि अपने क्षेत्र के सभी मामलों के प्रभारी थे। वे भीलों के मध्य विवादों का निपटारा भी करते थे। इस प्रकार अन्य अर्थो में गोविन्द गिरि की समानान्तर सरकार चलने लगी, किन्तु दूसरी ओर राजा व जागीरदारों द्वारा उनके शिष्यों का उत्पीड़न भी जारी रहा।

गोविन्द गिरि

बेडसा गोविन्द गिरि की गतिविधियों का केन्द्र बन गया था। ईडर, सूंथ, बांसवाड़ा व डूंगरपुर राज्यों तथा पंच महल व खेड़ा जिले के भील वहां आने लगे। इस आन्दोलन का प्रभाव सम्पूर्ण दक्षिणी राजस्थान के राज्यों व बम्बई सरकार के अन्तर्गत गुजरात के भील क्षेत्रों में फैल गया था। उनके बढ़ते हुए प्रभाव से भयभीत होकर अप्रैल, 1913 में डूंगरपुर पुलिस ने उन्हें गिरफ्तार कर लिया तथा उनका सभी सामान जब्त कर लिया था व उन्हें उनके धार्मिक पंथ को छोड़ने के लिए धमकाया। सामन्ती एवं आपैनिवेशिक सत्ता द्वारा उत्पीड़क व्यवहार ने गोविन्द गिरि एवं उनके शिष्यों को सामन्ती व औपनिवेशिक दासता से मुक्ति प्राप्त करने हेतु भील राज की स्थापना की योजना बनाने की ओर प्रेरित किया।

मानगढ़ धाम

गोविन्द गिरि अक्टूबर, 1913 में मानगढ़ पहाड़ी पर पहुँचे तथा भीलों को पहाड़ी पर एकत्रित होने के लिए सन्देशवाहक भेजे गए। धीरे–धीरे भारी संख्या में भील पहाड़ी पर आने लगे तथा साथ में राशन–पानी व हथियार भी ला रहे थे। इन गतिविधियों ने सूंथ, बांसवाड़ा, डूंगरपुर एवं ईडर राज्यों को चौकन्ना कर दिया था। इन सभी राज्यों ने अपने सम्बन्धित अंग्रेज अधिकारियों से मानगढ़ पर भीलों के जमावड़े व पालों में युद्ध के लिए तैयारी कर रहे भीलों को कुचलने की प्रार्थना की। 6 से 10 नवम्बर, 1913 में मेवाड़ भील कोर की दो कम्पनियां, 104 वेलेजली रायफल्स की एक कम्पनी व सातवीं राजपूत रेजीमेन्ट की एक कम्पनी मानगढ़ पर भीलों के जमावड़े को कुचलने के लिए पहुंची। विफल वार्ताओं के बाद 17 नवम्बर, 1913 को अंग्रेजी फौजों ने मानगढ़ की पहाड़ी पर आक्रमण कर दिया। मानगढ़ की पहाड़ी के सामने दूसरी पहाड़ी पर अंग्रेजी फौजों ने तोप व मशीन गनें तैनात कर रखी थीं एवं वहीं से गोला बारूद दागे जाने लगे। लगभग एक घन्टे तक मानगढ़ पर भीलों ने सेना का सफल मुकाबला किया, किन्तु आधुनिक युद्ध सामग्री के समक्ष अधिक समय तक वे टिक नहीं सके। मानगढ़ की पहाड़ी के नीचे तैनात अंग्रेजी फौज पहाड़ी को घेरते हुए ऊपर पहुंची तथा भीलों को अंधाधुंध गोलियों से भूनना आरम्भ कर दिया। भीलों में भी भगदड़ मच गई। कुछ ही समय में पहाड़ी पर भीलों ने आत्मसमर्पण कर दिया, उसके उपरान्त भी भीलों का कत्लेआम जारी रहा। अंग्रेजी दस्तावेजों के अनुसार कुल 100 भील मारे गए थे तथा 900 भीलों को बन्दी बना लिया गया। इनके साथ ही गोविन्द गिरि व पुन्जीया को भी बन्दी बना लिया गया था।

भील आन्दोलन कुचल दिया गया था। किन्तु भील अपने गुरू की गिरफ्तारी को लेकर आन्दोलित थे। भीलों में गोविन्द गिरि भारी लोकप्रिय थे क्योंकि उन्होंने उन्हें अनेक बुराइयों से मुक्ति दिलाई थी। अतः गोविन्द गिरि की लोकप्रियता के कारण उनकी आजीवन कारावास की सजा को दस वर्ष की सजा में बदल दिया गया था तथा सात वर्ष के पश्चात् इस शर्त पर रिहा कर दिया गया था कि वे सूंथ, डूंगरपुर, बांसवाड़ा, कुशलगढ़, एवं ईडर राज्यों में प्रवेश नहीं करेंगे। वे सरकारी निगरानी में अहमदाबाद सम्भाग के अन्तर्गत पंचमहल जिले के झालोद नामक गांव में रहने लगे। इसी स्थान पर सभी क्षेत्रों के भगत भील उनके प्रवचन सुनने वहाँ पहुँचने लगे।

उदयपुर राज्य में मोतीलाल तेजावत के नेतृत्व में आन्दोलन :

असहयोग आन्दोलन की जागृति के प्रभाव में 1921 में मेवाड़ व अन्य राज्यों के भीलों व गिरासियों ने मोतीलाल तेजावत के नेतृत्व में आन्दोलन छेड़ा। मोतीलाल तेजावत उदयपुर राज्य के झाडोल ठिकाने के अन्तर्गत कोलियारी गांव के निवासी व ओसवाल बनिया जाति के थे। उन्होंने कुछ समय झाडोल ठिकाने के कामदार के रूप में भी कार्य किया था। इसी दौरान वह इस ठिकाने के भीलों के सम्पर्क में आए। झाडोल के जागीरदार के साथ कुछ मतभेद हो जाने के कारण उन्होंने ठिकाने की नौकरी छोड़कर परचून का व्यवसाय आरम्भ किया। वह भील क्षेत्रों में घूम–घूमकर मिर्च मसाला आदि बेचते थे तथा पोसीना ठिकाने में सामलिया नामक स्थान पर लगने वाले चित्रे–विचित्रे के मेले में नियमित रूप से दुकान लगाते थे। अतः अपने व्यापार के माध्यम से वह उदयपुर राज्य के भीलों के अत्यधिक निकट सम्पर्क में आए।

मोतीलाल तेजावत की समाज सुधार की गतिविधियों ने उन्हें भीलों के मध्य काफी लोकप्रिय बना दिया था। इन उपदेशों के साथ उन्होंने आदिवासियों का एकी आन्दोलन भी आरम्भ किया। एकी आन्दोलन का उद्देश्य राज्यों व जागीरदारों द्वारा किए जाने वाले भीलों पर सभी प्रकार के शोषण के विरुद्ध संयुक्त रूप से विरोध करना था। मोतीलाल तेजावत की गतिविधियां तो झाडोल जागीर तक ही सीमित थी, किन्तु उनका प्रभाव अन्य भील क्षेत्रों में भी तीव्र गति से फैल रहा था। उनके बढ़ते हुए प्रभाव से सत्ताधारियों का चिन्तित होना स्वाभाविक था, अतः सत्ताधारियों ने इसे एक चुनौती के रूप में लेते हुए भीलों पर जुल्म करने के कठोरतम कदम उठाए। इसी दौरान तेजावत विजय सिंह पथिक अन्य नेताओं से मिले तथा उनके साथ विचार–विमर्श कर भीलों की समस्याओं के समाधान हेतु कार्यक्रम तैयार किया। वह असहयोग आन्दोलन से बहुत प्रभावित थे तथा वह भीलों का ऐसा ही आन्दोलन छेड़ना चाहते थे। इस समय तक बिजौलिया किसान आन्दोलन अपनी चरम सीमा पर था, जिसने तेजावत को भी उत्साहित किया तथा जब उसे बिजौलिया के नेताओं से समर्थन का आश्वासन मिल गया, तो उसने अपने कार्यक्रम को अन्तिम रूप प्रदान किया। जुलाई, 1921 में उन्होंने भीलों का करबन्दी सहित असहयोग आन्दोलन आरम्भ कर दिया था।

झाडौल का शासक (सामंत) इस स्थिति से चिंतित हो गया था एवं स्थिति को नियंत्रण में लाने के ध्येय से उसने 19 अगस्त, 1921 को मोतीलाल तेजावत को गिरफ्तार कर लिया। तेजावत की गिरफ्तारी ने भीलों को और अधिक उत्तेजित कर दिया था। अपने नेता को मुक्त कराने के लिए हजारों भील एकत्रित हो गए। भीलों के भारी जमावड़े ने तेजावत को मुक्त करने हेतु ठाकुर को बाध्य कर दिया था। इसके पश्चात्

तेजावत ने अपना आन्दोलन और भी तीव्र कर दिया।

दिसम्बर, 1921 तक उदयपुर राज्य में किसान एवं आदिवासी आन्दोलनों के कारण एक विस्फोटक स्थिति उत्पन्न हो गई थी। भील–आन्दोलन के बढ़ते हुए प्रभाव को देखते हुए ब्रिटिश अधिकारियों ने 1 जनवरी, 1922 को भीलों को कुछ छूट देने का निर्णय लिया एवं तदनुसार जागीरदारों को सलाह दी गई थी। आन्दोलन के परिणामस्वरूप राज्य का यह निर्णय समर्पण का सूचक था, जिसने भीलों की इच्छा शक्ति को और अधिक बढ़ा दिया था।

जनवरी, 1922 में मोतीलाल तेजावत ने सिरोही राज्य में प्रवेश किया जहाँ भारी संख्या में भील व गिरासिया आदिवासी रहते थे। वे उदयपुर के आन्दोलन से बहुत प्रभावित थे एवं सिरोही में ऐसा ही आन्दोलन छेड़ना चाहते थे। वास्तव में मोतीलाल तेजावत उदयपुर राज्य के भय से उदयपुर से भागकर सिरोही नहीं गए थे, बल्कि उन्हें सिरोही के भीलों व गिरासियों ने अपने मार्गदर्शन हेतु आमन्त्रित किया। इस समय तक उन्हे यह भी पूरा भरोसा हो गया था कि उदयपुर में उनके अनुयायी उनकी अनुपस्थिति में आन्दोलन चलाने में सक्षम थे।

सिरोही राज्य मोतीलाल तेजावत के नेतृत्व में आदिवासी आन्दोलन का दूसरा महत्वपूर्ण केन्द्र बना। सिरोही राज्य में भी आदिवासियों की जीवन दशाएँ मेवाड़ राज्य के भीलों के समान ही थी। सन् 1922 में तेजावत ने सिरोही राज्य के आदिवासियों में प्रवेश किया। यहाँ भी उन्होंने उदयपुर के भीलों की पद्धति पर गिरासिया आदिवासियों में समाज सुधाार के कार्य आरम्भ किए। उसने गिरासियों के उत्थान हेतु समाज सुधार के साथ–साथ एक आर्थिक संघर्ष भी आरम्भ किया। जनवरी, 1922 में तेजावत ने भ्रमण करते हुए भीलों व गिरासियों की अनेक सभाएँ की तथा उन्हें कर बन्दी व राज्य के साथ असहयोग हेतु खुला आह्वान दिया।

11 फरवरी, 1922 को कांग्रेस ने असहयोग आन्दोलन वापस ले लिया था तथा ब्रिटिश अधिकारियों ने सम्पूर्ण भारत में किसान व आदिवासी आन्दोलनों को शक्तिपूर्वक कुचलने की नीति बनाई। दीवान रमाकान्त मालवीय ने गांधी, पथिक व राजस्थान सेवा संघ के नेताओं की सहायता से सिरोही के आदिवासी आन्दोलन को समाप्त करने के प्रयास किए थे, किन्तु अपने प्रयासों की असफलता से झुंझलाकर गिरासियों के मुख्य गाँवों सियावा में कर वसूली के लिए सेना भेजने का निर्णय लिया। राज्य व अंग्रेजों की सेना ने इस गाँव पर 12 अप्रैल, 1922 को आक्रमण कर दिया। इस सैनिक कार्रवाई में अनेक गिरासियों की जाने गई तथा फौज ने उनके घर, अनाज व पशु जलाकर उनको भारी नुकसान पहुँचाया। इसके पश्चात् भी सैनिक अभियान जारी रहा। 5 मई, 1922 को सेना ने बलोरिया गांव पर आक्रमण किया तथा इस गांव का बहुत बड़ा भाग जला दिया व इसमें 11 आदिवासियों की जानें गईं। 6 मई को भूला एवं नवावास नामक गांव को सैनिक आक्रमणों का शिकार होना पड़ा तथा इन गांवों की अधिकांश झोंपड़ियों को जलाकर राख कर दिया गया था।

सिरोही राज्य व अंग्रेजी सेना की संयुक्त कार्रवाइयों ने भीलों व गिरासियों का मनोबल तोड़ दिया था। ऐसी स्थिति में भूला, नवावास, वलोलिया व अन्य प्रभावित गांवों के आदिवासी मुखिया सिरोही के दीवान व पॉलिटिकल ऑफिसर से 11 व 12 मई, 1922 को मिले एवं एकी की शपथ तोड़ने हेतु सहमति व्यक्त की। इन अधिकारियों के समक्ष आदिवासी मुखियाओं ने एकी आन्दोलन की निन्दा करते हुए इससे

अपने आपको अलग घोषित किया। इस प्रकार सिरोही के आदिवासी आन्दोलन को सत्ता पक्ष द्वारा कुचल दिया गया। अधिकारियों की मान्यता थी कि आदिवासियों ने एकी आन्दोलन को किसी राजनीति के तहत स्थगित कर दिया है एवं इस आन्दोलन के पुनर्जीवित होने की पूर्ण सम्भावना है। अतः दीवान व अधिकारियों ने सिरोही के शासक को सुझाव दिया कि आदिवासियों को कुछ छूट व सहूलियत देकर ही पूर्णतः शान्ति स्थापित की जा सकती है।

मोतीलाल तेजावत ने 1923 ई. के आरम्भ में पुनः एकी आन्दोलन आरम्भ करने का प्रयास किया, किन्तु उन्हें सफलता नहीं मिली। फिर भी सिरोही राज्य में भाखर, सांथपुर, पिन्डवाड़ा आदि परगनों में अशान्ति बनी रही। सन् 1927 में जाकर आदिवासी पंचों ने सिरोही राज्य के अधिकारियों के साथ समझौता किया। तत्पश्चात् इन परगनों में शान्ति स्थापित की जा सकी। मोतीलाल तेजावत के नेतृत्व में आरम्भ हुआ सिरोही का आदिवासी आन्दोलन सही अर्थों में 1929 में तेजावत की गिरफ्तारी के पश्चात् ही समाप्त हुआ।

उदयपुर व सिरोही राज्यों के भील व गिरासिया 1921–29 के मध्य मोतीलाल तेजावत के नेतृत्व में अशान्त बने रहे। राज्यों, जागीरदारों व अंग्रेजों ने अशिक्षित व भोले आदिवासियों पर सभी प्रकार के अत्याचार किए। इसी क्रम में सैनिक कार्रवाइयों की एक शृंखला आरम्भ की गई थी, जिसने आदिवासियों का मनोबल तोड़ दिया था। जनवरी, 1924 के पश्चात् तेजावत भूमिगत हो गए, क्योंकि उनकी गिरफ्तारी पर उदयपुर, सिरोही व ईडर राज्यों ने पुरस्कार घोषित कर दिए। अधिकारियों की यह स्पष्ट मान्यता थी कि जब तक तेजावत को नहीं घेरा जाएगा, तब तक आदिवासी आन्दोलन शान्त नहीं हो सकता। 3 जून, 1929 को ईडर राज्य की पुलिस ने खेडब्रह्म नामक गांव में तेजावत को गिरफ्तार कर लिया। ईडर पुलिस ने उसे उदयपुर राज्य को सौंप दिया, जहाँ उनके विरुद्ध आपराधिक मुकदमा चलाया गया। सन् 1936 तक इसमें कोई अन्तिम निर्णय नहीं हुआ तथा तेजावत को जेल में ही रखा गया। उन्हें 3 अप्रैल, 1936 को जेल से इस शर्त पर रिहा किया गया कि वह कोई आन्दोलनात्मक कार्य नहीं करेंगे तथा उदयपुर राज्य की अनुमति के बिना उदयपुर शहर से बाहर नहीं निकलेंगे। उदयपुर राज्य ने उनके गुजारे के लिए 30 रुपये प्रतिमाह का भत्ता स्वीकृत किया। पुनः उन्हें जनवरी, 1945 में बन्दी बना लिया गया था, जब उन्होंने भौमट क्षेत्र में प्रवेश करने की कोशिश की तथा उसे फरवरी, 1947 में जेल से रिहा किया गया।

मीणा विद्रोह (1851–1860)

नई भूमि व राजस्व व्यवस्था के प्रति अपना रोष प्रकट करने के लिए 1851 ई. में उदयपुर राज्य के जहाजपुर परगने के मीणाओं ने अंग्रेजों के विरुद्ध विद्रोह कर दिया था। इस क्षेत्र की मीणा जाति पर्याप्त रूप में किसी भी राजनीतिक सत्ता से मुक्त थी, केवल महाराणा मेवाड़ की प्रतीकात्मक सत्ता स्वीकार करते थे। कर्नल टॉड ने इनका जीवन्त विवरण प्रस्तुत किया है, जो उपर्युक्त तथ्य को सिद्ध करता है। ये अंग्रेज ही थे, जो इस क्षेत्र पर उदयपुर राज्य का कठोर नियंत्रण स्थापित कर सके। ब्रिटिश शासित अजमेर प्रान्त के समीप स्थित इस मीणा क्षेत्र पर राज्य की सत्ता स्थापित हो सकी थी। वास्तव में अंग्रेज आदिवासी समुदायों के प्रति पूर्वाग्रहों से ग्रसित थे। इसलिए अंग्रेज इन लोगों के साथ बड़ी कठोरता का व्यवहार करते थे। 1820 – 21 में अंग्रेजों द्वारा मेरों के दमन से मीणा समुदाय के लोग भली भाँति परिचित थे। अतः जहाजपुर क्षेत्र के मीणा समुदाय तथा अंग्रेज अधिकारियों के मध्य विरोध अस्तित्व में आया।

मीणा व भीलों के विद्रोह केवल अंग्रेजों के विरुद्ध ही नहीं थे, बल्कि वे सम्बन्धित रियासतों के विरुद्ध भी थे, जिनके माध्यम से अंग्रेज अपनी नीतियों को कार्यान्वित करवा रहे थे।

महाराणा मेवाड़ ने 1851 ई. में जहाजपुर परगने में नया हाकिम नियुक्त किया। नवनियुक्त हाकिम मेहता रघुनाथ सिंह परगने से धन कमाने में व्यस्त था। उसने अपना ध्यान मुख्य तौर पर परगने की आय में वृद्धि तथा खर्चे मे कमी पर केन्द्रित किया। प्रशासनिक सुधारों के नाम पर जनता से धन वसूली की प्रतिक्रिया के फलस्वरूप बहुसंख्यक मीणा समुदाय ने विप्लव का रास्ता अपनाया। विद्रोही मीणाओं ने ना केवल राजस्व अधिकारियों व सूदखोरों को लूटा, बल्कि समीप स्थित अजमेर–मेरवाड़ा के अंग्रेजों के प्रान्त पर भी धावे मारे। अंग्रेज अधिकारियों की शिकायतों के आधार पर महाराणा ने हाकिम का स्थानान्तरण कर मेहता अजीत सिंह को विद्रोही मीणाओं के दमन के कठिन कार्य को पूरा करने के उद्देश्य से हाकिम नियुक्त किया। वह उदयपुर से एक सेना लेकर रवाना हुआ। इसके साथ शाहपुरा, बनेड़ा, बिजौलिया, भैंसरोड़, जहाजपुर एवं मांडलगढ़ के जागीरदारों की सेनाएँ सम्मिलित थी। इनके अतिरिक्त भीम पल्टन व एकलिंग पल्टन के सिपाही दो तोपों सहित इस सेना के साथ जोड़े गए। एजेन्ट टू गवर्नर जनरल इन राजपूताना के कहने पर जयपुर, टोंक एवं बूँदी राज्यों ने अपने राज्य की सीमाओं पर चौकसी पक्की कर दी, जिससे जहाजपुर के मीणाओं को अन्य राज्यों के मीणाओं द्वारा सहायता व समर्थन की सम्भावना को समाप्त कर दिया गया।

उदयपुर की सेनाओं ने छोटी लुहारी व बड़ी लुहारी नामक गांवों पर आक्रमण किया, जो मीणा–विद्रोह के मुखियाओं के गांव थे। सेनाओं ने दोनों ही गांवों को नष्ट कर दिया तथा मीणा सपरिवार मनोहरगढ़ एवं देवखेड़ा की पहाड़ियों की ओर भागे, वहाँ उन्होंने रक्षात्मक स्थिति प्राप्त कर ली थी। इसी बीच जयपुर, बूँदी, टोंक राज्यों से तमाम प्रतिबन्धों के उपरान्त भी लगभग 5000 मीणा लोग जहाजपुर के मीणाओं की सहायतार्थ पहुँच गए थे। उदयपुर की सेनाओं ने भरसक प्रयत्न किए, किन्तु सघन झाड़ियों व पहाड़ी प्रदेश होने के कारण सैनिक कार्रवाई में अनेक रुकावट उत्पन्न हो रही थी, इसलिए इस सेना को कोई सफलता नहीं मिली। राज्य सेना के लगभग 57 सिपाही इस अभियान में मारे गए।

दिसम्बर, 1854 में एजेन्ट टू गवर्नर जनरल इन राजपूताना, मेवाड़ का पॉलिटिकल एजेन्ट, व हाड़ौती का पॉलिटिकल एजेन्ट संयुक्त रूप से सेना सहित जहाजपुर पहुँचे तथा जहाजपुर व ईटोदा में एक महिने तक रुके रहे। जनवरी, 1855 के अन्त तक मीणा विद्रोही इस सेना के समक्ष आत्मसमर्पण के लिए बाध्य हो गए थे। भविष्य में मीणाओं का सामना करने के उद्देश्य से फरवरी, 1855 में जयपुर, अजमेर, बूंदी एवं मेवाड़ की सीमाओं पर स्थित देवली में एक सैनिक छावनी स्थापित की। मीणाओं पर नियमित निगरानी रखने के ध्येय से छावनी के आस–पास पुलिस थाने भी स्थापित किए गए। इस प्रकार मीणाओं का विद्रोह दबाया जा सका।

1855 ई. में देवली छावनी को नवगठित अनियमित सेना का मुख्यालय बनाया गया था, जो 1857 से 1860 के दौरान 42वीं देवली रेजीमेन्ट अथवा मीणा बटालियन के नाम से जानी जाती रही। 1921 में 42वीं देवली रेजीमेन्ट व 43वीं एरिनपुरा रेजीमेन्ट को समाप्त कर दिया। उनके स्थान पर मीणा कोर की स्थापना की गई थी। देवली ने इस सेना का गठन राजस्थान में आदिवासियों के प्रति अंग्रेजी नीति का विस्तार कहा जा सकता है। वास्तव में इस तरह के दमनात्मक उपायों का विस्तार आदिवासी समस्या

का समाधान नहीं था, किन्तु नवगठित अमानवीय व अपवित्र औपनिवेशिक व सामन्ती मेल द्वारा स्थापित राजनीतिक सत्ता से और कुछ आशा नहीं की जा सकती थी।

पुनः जनवरी, 1860 में जहाजपुर के मीणाओं ने विद्रोह कर दिया। महाराणा ने 29 जनवरी, 1860 को चन्दसिंह के नेतृत्व में जहाजपुर की ओर एक सेना भेजी। उसने गाढ़ोली व लुहारी गांवों पर आक्रमण किया। राज्य सेना ने गांवों को लूटा व आगजनी भी की। भारी संख्या में मीणाओं को बन्दी बनाया गया तथा 6 लोगों को तोप से उड़ा दिया गया था। मीणाओं पर पुलिस थानों में नियमित उपस्थिति थोप दी गई थी। इस प्रकार जहाजपुर का मीणा–विद्रोह अन्तिम रूप से नियंत्रित हो गया था।

अभ्यास प्रश्न

अति लघु उत्तरात्मक प्रश्न :

1. मेरवाड़ा बटालियन का मुख्यालय कहां स्थित था?
2. मेवाड़ भील कोर का मुख्यालय कहां स्थित था ?
3. भगत पंथ के प्रतिपादक कौन थे ?
4. एकी आंदोलन किसने आरम्भ किया?
5. 1921 ई. में देवली रेजीमेंट और एरिनपुरा रेजीमेंट को समाप्त कर किस नवीन बटालियन का गठन किया गया?

लघु उत्तरात्मक प्रश्न :

1. उन्नीसवीं सदी में राजस्थान में हुए भील–विद्रोह के कारणों को रेखांकित कीजिए।
2. भील समुदाय में हुए समाज सुधार आंदोलन में गोविन्द गिरि की भूमिका का वर्णन कीजिए।
3. मोतीलाल तेजावत के नेतृत्व में उदयपुर प्रान्त में हुए आदिवासी विद्रोहों का वर्णन कीजिए।

निबंधात्मक प्रश्न :

1. स्वतंत्रता पूर्व हुए राजस्थान के प्रमुख आदिवासी आंदोलनों की समीक्षा कीजिए।
2. 1851 ई. से 1860 ई. के मध्य राजस्थान में हुए मीणा–विद्रोह की प्रमुख घटनाओं का वर्णन कीजिए।